पुस्तकें : झरोखा दुनिया का

मनोज निगम

कहते हैं कि बच्चे देश, समाज का भविष्य होते हैं और पुस्तकें उनका आईना। समझ विकसित करने में पाठ्यपुस्तकें नाकाफ़ी हैं। कक्षा के बाहर भी एक दुनिया है और इस दुनिया का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा पुस्तकें हैं। लेकिन बच्चों के लिए अच्छी पुस्तकों की उपलब्धता हमारे देश में बहुत कम है, आप इस बात से अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि एक सर्वे के अनुसार यूनाईटेड किंगडम में जहाँ एक बच्चे के पास छह पुस्तकें उपलब्ध होती हैं, वहीं भारत में पाँच बच्चों पर केवल एक पुस्तक उपलब्ध है। इतना बड़ा अन्तर! यह जानकारी सरकार-समाज को नहीं है, जबकि सब मानते हैं कि बेहतर पुस्तकें पढ़ना व्यक्तित्व विकास के लिए बहुत ही ज़रूरी है।

जब भी शिक्षा व्यवस्था में सुधार या सीखने-सिखाने की बात होती है या शैक्षिक नीतियाँ बनती हैं, तो अधिकतर, पढ़ने की आदत के विकास के लिए चिन्ता व्यक्त की जाती है और स्वतंत्र रूप से सीखने के लिए पुस्तकालयों के महत्त्व की बात होती है। मुदलियार आयोग की रपट में कहा गया था कि पुस्तकालय को विद्यालय की सबसे आकर्षक जगह होना चाहिए। बुनियादी साक्षरता की मज़बूती के लिए पुस्तकों और पुस्तकालयों को बहुत महत्त्व दिया जाता रहा है। नई शिक्षा नीति 2019[1] के प्रारूप में भी स्कूल और सार्वजनिक (सरकारी) पुस्तकालयों को विस्तार देना एवं पढ़ने और संवाद करने की संस्कृति को विकसित करने को प्रमुखता से दर्ज किया है।

पढ़ने की संस्कृति को विकसित करने के उद्देश्य से एकलव्य फ़ाउंडेशन के शैक्षिक नवाचारों की शुरुआत से ही पुस्तकालय विभिन्न शैक्षिक परियोजनाओं का एक महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य हिस्सा रहा है। जहाँ बच्चे कक्षा में पाठ्यपुस्तक के अलावा भी पुस्तकें पढ़ सकें, पुस्तकों के इर्द-गिर्द विभिन्न गतिविधियाँ कर सकें। लगभग तीन दशक पहले के उस दौर में भी देश में, ख़ासतौर पर हिन्दी भाषी इलाकों में, न तो पुस्तक पढ़ने की संस्कृति थी और न ही पुस्तकों की उपलब्धता। एकलव्य ने यह पाया कि बच्चों के लिए तथा शिक्षा पर, गुणवत्तापूर्ण पुस्तकों की कमी है, और प्रकाशक भी कम ही हैं, माँग तो नहीं है लेकिन ज़रूरत तो है ही। एकलव्य ने शिक्षा के क्षेत्र में अपने ज़मीनी अनुभवों से काफ़ी कुछ सीखा था।

बच्चों की पुस्तकों की ज़रूरत

शैक्षिक नज़रिए से बच्चों की उम्र और रुचि के अनुसार पुस्तकों की बहुत कमी थी, कुछ पुस्तकें थीं भी तो उनकी क़ीमतें आम आदमी की जेब से बाहर थीं। हिन्दी में किशोरों के लिए और रचनात्मक गतिविधियों की पुस्तकें तो लगभग नहीं के बराबर थीं। शिक्षकों के लिए भी उपलब्ध पुस्तकों का यही हाल था। शिक्षाशास्त्रीय पुस्तकें उपलब्ध नहीं थीं, कुछ थीं भी तो उनको पढ़कर समझना मुश्किल था। इन्हीं कमियों को देखते हुए एकलव्य ने बाल-विज्ञान पत्रिका *चकमक, शैक्षिक संदर्भ* और *स्रोत* के प्रकाशन के अनुभव के आधार पर प्रकाशन कार्यक्रम की शुरुआत की। शुरुआती चार-पाँच वर्षों में एकलव्य के प्रकाशन उसके अपने कार्यक्षेत्र में ही उपयोग किए जाते रहे। अपने कार्यक्षेत्र से बाहर पुस्तकों की उपलब्धता की कमी का अन्दाज़ा तो था हमें लेकिन कोई अनुभव नहीं था। हम मानते थे कि अँग्रेज़ी में बच्चों के लिए भारतीय सन्दर्भ में अच्छी पुस्तकें उपलब्ध होंगी। हिन्दी और अन्य भाषाओं में उस दौर में नेशनल बुक ट्रस्ट और चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट जैसे कुछेक प्रकाशन संस्थान ही थे। 1990 के दशक में जब प्रकाशन के क्षेत्र में थोड़ा अनुभव हुआ तो यह जाना कि न केवल हिन्दी में बल्कि अँग्रेज़ी में भी बच्चों के साहित्य की बहुत कमी थी, अन्य भारतीय भाषाओं में बाल-साहित्य भी कम ही उपलब्ध था और बड़े शहरों को छोड़ दिया जाए तो उपलब्धता नगण्य थी।

2011 के आस-पास व्यवसायिक संस्थानों के सबसे बड़े एसोसिएशन फिक्की (FICCI[ii] -Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry) ने प्रकाशन को एक अलग सेक्टर के रूप में देखना शुरू किया। भारतीय विंग की शुरुआत की गई जो कि प्रकाशन से जुड़े तमाम अध्ययन, सर्वे, सेमिनार, वर्कशॉप आदि कर रहा है। फिक्की के अनुसार प्रकाशन के क्षेत्र में भारत की गिनती दुनिया के सात बड़े देशों में की जाती है।

इसी तरह बेहतर और मौलिक बाल-साहित्य के निर्माण और प्रसार को सहायता देने वाला टाटा ट्रस्ट का *पराग* इनीशिएटिव भी बाल-साहित्य के पूरे ईको-सिस्टम को बेहतर

करने का प्रयास करता रहा है। *पराग* इनीशिएटिव के माध्यम से वेल्यूनोट्स संस्थान द्वारा किए गए एक अध्ययन से पता चलता है कि पिछले दो दशकों में संगठित क्षेत्र से करीब 100 प्रकाशक उभरे हैं। लेकिन इनमें 15 से 20 प्रकाशक ही उत्कृष्ट और मौलिक सामग्री को प्रकाशित कर उपलब्ध करवाते हैं। हालाँकि देश भर में बच्चों के लिए पुस्तकें छापने के लिए लगभग 2500 प्रकाशक हैं, लेकिन अधिकांश दोयम दर्जे की ही पुस्तकें प्रकाशित करते हैं। 2013-14 में कराए गए इसी अध्ययन[iii] के अनुसार देश में प्रकाशन का मार्केट लगभग 11,500 करोड़ रुपए का है, इसमें बाल साहित्य का मार्केट मुश्किल से 600 करोड़ रुपए का है, एवं 20-25 प्रतिशत की वार्षिक दर से बढ़ रहा है। बाल-साहित्य का मार्केट, कुल मार्केट साईज़ का 5 प्रतिशत है। देश में बाल-साहित्य की सबसे बड़ी ख़रीददार सरकार है। 30 प्रतिशत बाल-साहित्य शहरी इलाकों में जाता है जबकि 70 प्रतिशत ग्रामीण इलाकों में वितरण के लिए होता हैI

एकलव्य के प्रकाशन

एकलव्य के प्रकाशनों को विकसित करने एवं उनको प्रसारित करने का काम टाटा ट्रस्ट एवं कुछ अन्य संस्थाओं के समर्थन से निर्बाध रूप से चलता रहा। टाटा ट्रस्ट के अध्ययन में भी यह निष्कर्ष निकला कि बाल-साहित्य को विकसित करने में बहुत सारी चुनौतियाँ हैं जैसे कि बाल-साहित्य के क्षेत्र में टैलेन्ट की कमी है, मौलिक बाल-साहित्य को विकसित करने में बहुत अधिक ख़र्चा होता है। साथ ही रचनाकारों को मेहनताना और पहचान भी कम ही मिल पाता है। तमाम चुनौतियों के बावजूद भी एकलव्य के प्रकाशनों के पोर्टफ़ोलियो में आज 450 से अधिक पुस्तकें हैं। इसमें छोटे बच्चों, किशोरों, शिक्षकों, शैक्षिक कार्यकर्ताओं की रुचियों और ज़रूरत के अनुसार चित्रकथाएँ, कहानी, कविता गतिविधियों की पुस्तकें, नाटक, पज़ल्स, शिक्षाशास्त्र सम्बन्धी पुस्तकें, नवाचारी पाठ्यपुस्तकें हैं। पुस्तकें और साहित्य, विभिन्न फार्मेट में विकसित किए गए हैं, जैसे छोटी पुस्तकें, बड़ी पुस्तकें (big books), अकार्डियन पुस्तकें, कार्ड्स, पोस्टर्स ताकि पाठक अपनी ज़रूरत के अनुरूप इनका उपयोग कर सकें।

गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक पुस्तकों की कमी को पाटने के लिए एकलव्य के साथ ही अन्य कुछ संस्थाओं जैसे प्रथम, तूलिका, कथा, ए एंड ए पब्लिशर्स, ज्योत्सना प्रकाशन, सीएलआर, अन्वेषी, सहमत आदि ने भी बेहतर पुस्तकों को प्रकाशित किया है। नेशनल बुक ट्रस्ट, एनसीईआरटी, चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, नवनीत प्रकाशन, स्कालास्टिक इंडिया जैसी संस्थाएँ तो पहले से काम कर ही रहीं थीं।

वर्ष 2000 तक एकलव्य द्वारा विकसित की गई पुस्तकों की संख्या 50-60 के आस-पास पहुँच चुकी थी। विश्व पुस्तक मेले जैसे आयोजनों में हमारा जाना हुआ और हमारी पुस्तकों को उत्साहवर्धक रेस्पोंस मिला। इसी दौरान हमने यह पाया कि एकलव्य ने ही बाल-साहित्य और शिक्षा-साहित्य पर अच्छा काम किया हो ऐसा नहीं है, देश की कुछ अन्य संस्थाओं और प्रकाशकों ने भी इस क्षेत्र में बेहतरीन काम किया है। लेकिन सभी के सामने एक बड़ी दिक़्क़त यह थी कि उनके प्रचार-प्रसार के चैनल बहुत ही सीमित थे।

पिटारा की पहल

उसी दौरान यह आईडिया आया कि क्यों न एक ऐसी जगह बनाई जाए, जहाँ न केवल एकलव्य के बल्कि देश भर के तमाम प्रकाशकों एवं संस्थानों के द्वारा विकसित, बच्चों एवं शिक्षा पर उपलब्ध पुस्तकों एवं टीएलएम को इकट्ठा कर आम लोगों के लिए उपलब्ध करवाया जाए। अब तक हम पुस्तकों को अपने ऑफिस के अन्दर एक छोटे-से अँधेरे स्टोर रूम में रखते थे। उसी समय एक बदलाव यह हुआ कि हमारे तत्कालीन निदेशक जो कि हमारे भोपाल के ऑफिस से सटे हुए गैराज में बैठा करते थे, उनके लिए अलग ऑफिस की व्यवस्था हुई तो यह तय किया गया कि इस गैराज में हम एक ऐसी जगह बनाएँगे जहाँ आम-जन, शिक्षक, संस्थाओं के कार्यकर्ता आ सकें, पुस्तकें देख-पढ़ सकें और उन्हें ख़रीद सकें। इस जगह का नाम हमने *'पिटारा'* रखा और बाद में इसको *पिटारा*-वन स्टाप एजूकेशन स्टोर का नाम दिया गया। भोपाल में उस वक़्त पढ़ने-पढ़ाने की संस्कृति कम ही थी फिर भी पिटारा को अच्छा रेस्पोंस मिला। इससे उत्साहित होकर हमने एकलव्य के इन्दौर ऑफिस में भी पिटारा की शुरुआत की, और वहाँ भी रेस्पोंस बहुत ही उत्साहवर्धक रहा।

फिर हमने यह सपना देखा कि क्यों न देश भर के तमाम शहरों में पिटारा की स्थापना की जाए। लेकिन अपने पास उपलब्ध स्रोतों की कमी को देखते हुए हमने अन्य शहरों में शिक्षा में काम कर रहीं संस्थाओं और छोटे समूहों के साथ मिलकर इसे करने का सोचा और विभिन्न शहरों में संस्थाओं से सम्पर्क करना शुरू किया। कुछ संस्थाओं को यह पहल अच्छी लगी और फिर दुर्ग, फैज़ाबाद, मुम्बई, उदयपुर, कानपुर, कोलकाता, दिल्ली, गुड़गाँव, जम्मू, सूरत, वल्साड़, पटना, रायपुर, पुणे जैसे शहरों में *पिटारा* की शुरुआत हुई।

पिटारा में नेशनल बुक ट्रस्ट, चिल्ड्रन बुक ट्रस्ट, तूलिका, कथा, प्रथम, नवनीत, एनसीईआरटी, विज्ञान प्रसार, पर्यावरण एजूटेक, होमी भाभा सेंटर फॉर साइंस, निरन्तर, सहमत, अरविन्द कुमार पब्लिशर्स, समावेश, जोड़ो ज्ञान, नवनिर्मिति, मांटेसरी बाल शिक्षण समिति जैसी करीब 50 संस्थाओं की 2500 से अधिक चुनिन्दा पुस्तकों को रखा गया। जैसे-जैसे

फैलाव होता गया वैसे-वैसे ही तमाम अच्छे-बुरे अनुभवों से भी रूबरू होना पड़ा। सबसे अधिक मुश्किल तो *पिटारा* जैसे प्रभाग को सस्टेन करने की रही। जिन भी संस्थाओं के माध्यम से पिटारा की शुरुआत की गई, उनकी ओर से *पिटारा* को सब्सिडी दी गई। इस सपने को पूरा करने के लिए टाटा ट्रस्ट ने भी हमें शुरुआती आर्थिक समर्थन दिया। लगभग 10 सालों के दौरान 22 शहरों में *पिटारा* खुले। हमें लगने लगा था कि हम देश भर में, 50 से अधिक शहरों में *पिटारा* खोलकर गुणवत्तापूर्ण बाल-साहित्य और शिक्षा-साहित्य को प्रसारित करके पढ़ने-पढ़ाने का एक माहौल बना सकेंगे। लेकिन बिक्री की कमी के चलते आर्थिक संकटों से जूझते हुए हमें यह स्वीकार करना पड़ा कि अच्छी पुस्तकों को उपलब्ध करवाना भले ही हमारा उद्देश्य हो लेकिन *पिटारा* का हमारा मॉडल एक तरह से घाटे का मॉडल ही था।

हालाँकि पिटारा जैसी पहल को चलाए रखने में तो हम बहुत अधिक सफल नहीं हो सके। लेकिन इसके माध्यम से हम शिक्षा और बच्चों से जुड़ी ग़ैर–सरकारी संस्थाओं में, पुस्तक मेलों में, सरकार की विभिन्न स्कीमों में, स्कूलों में पैरेंट्स-टीचर मीटिंग के दौरान बच्चों और शिक्षा पर चुनिन्दा पुस्तकों को प्रचारित-प्रसारित कर रहे थे। एकलव्य के, शिक्षा के क्षेत्र में लम्बे अनुभव के कारण *पिटारा* की एक उपलब्धि यह रही कि हम गुणवत्तापूर्ण पुस्तकों और टीएलएम का एक बेहतर रिसोर्स, कम कीमत पर पाठकों को उपलब्ध करवा सके। साथ ही, एकलव्य से जुड़ी तमाम संस्थाओं, शैक्षिक कार्यकर्ताओं, बहुत सारे पालकों, शिक्षकों के बीच हम यह विश्वास बना पाए कि *पिटारा* में जो पुस्तकें एवं शैक्षिक सामग्री मिलेगी वह शिक्षा के नज़रिए से चुनी हुई होगी। यह सुविधा तो है ही कि एक ही छत के नीचे देश भर की चुनिन्दा पुस्तकें उपलब्ध हो रही हैं। इंटरनेट की सुविधा के विस्तार के बाद, दूर-दराज के पाठकों की सुविधा के लिए शापिंग पोर्टल pitarakart.com की शुरुआत की गई।

इसी दौरान, इन पुस्तकों का उपयोग कैसे किया जाए इसके मार्गदर्शन के लिए विभिन्न संस्थाओं और स्कूलों से माँग के चलते एकलव्य और अन्य संस्थाओं में कार्यशालाएँ आयोजित की जाने लगीं। पढ़ने-पढ़ाने की संस्कृति को विकसित करने के लिए स्कूलों में स्टोरी टेलिंग सेशन्स के माध्यम से बच्चों और शिक्षकों तक पहुँच बनी। पुस्तकों में दी गई विज्ञान, सामाजिक अध्ययन और भाषा की गतिविधियों, क्राफ्ट, ओरिगेमी आदि को बड़े पैमाने पर फैलाया गया।

ग्रामीण इलाकों में बाल-साहित्य

टाटा ट्रस्ट के अध्ययन के अनुसार 70 प्रतिशत पुस्तकें ग्रामीण इलाकों में वितरण के लिए होती हैं जिनमें से लगभग 20 प्रतिशत ही पाठकों तक पहुँचती हैं। पुस्तकों को कितने बच्चे खोलते और पढ़ते होंगे, इसके कोई आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं। कई प्राइवेट स्कूलों में लाईब्रेरी बस अपने स्कूल की मान्यता बरकरार रखने के लिए, अधिकारियों को दिखाने भर के लिए होती है।

एकलव्य द्वारा मध्यप्रदेश के देवास और उज्जैन ज़िले एवं बैतूल ज़िले के आदिवासी बहुल इलाके शाहपुर के लगभग 17 गाँवों में किए गए एक अध्ययन[iv] के अनुसार 100 परिवारों में पुस्तकों की प्राथमिकता एकदम आख़िरी में थी। केवल एक ही परिवार के सदस्य ने ज़िला मुख्यालय में जाकर एक पुस्तक ख़रीदी थी। इस अध्ययन के बाद हमारे कुछ प्रयास पुस्तकों को अधिक छूट पर गाँवों में पहुँचाने के रहे। ग्रामीण इलाकों के साप्ताहिक हाट में हम पुस्तकों के स्टाल लगाने लगे। वहाँ हमें कई मज़ेदार अनुभव हुए जैसे कहा गया कि इन लोगों को कहीं से मुफ़्त में पुस्तकें मिल गई हैं इसीलिए यह लोग गाँव में सस्ती पुस्तकें दे रहे हैं। देवास जिले के एक साप्ताहिक हाट में गए तो वहाँ बिक्री तो नहीं हो रही थी लेकिन बच्चे और महिलाएँ पुस्तकों को उलट-पलट कर देख रहे थे। हमारे लिए यह ख़ुशी और सुकून की बात थी। हाट में जामुन बेचता हुआ एक बच्चा मिला, जिससे हमने पाँच रूपए के जामुन लिए। हमें सुखद आश्चर्य हुआ कि वही बच्चा पाँच रूपए लेकर आया और एक पुस्तक ख़रीदकर ले गया। यह हमारे लिए एक सुखद घटना थी लेकिन सच्चाई यह भी थी कि इस हाट बाज़ार की बिक्री से हमारे आने-जाने का ख़र्च भी नहीं निकल सका। आगे भी ग्रामीण इलाकों में पुस्तकों की पहुँच की कोशिशें जारी रहीं लेकिन आर्थिक कारणों से हम उसे आगे नहीं बढ़ा सके। लेकिन यह सुकून है कि तमाम संस्थाओं की विभिन्न परियोजनाओं के माध्यम से ग्रामीण और सुदूर इलाकों में बच्चों तक पुस्तकें पहुँच रही हैं।

शहरों में स्थिति

इसी दौर हमने कुछ शहरों में छानबीन की तो मालूम हुआ कि किसी भी शहर में बच्चों के लिए पुस्तकें एक छत के नीचे उपलब्ध नहीं थीं। कुछ नामी प्रकाशकों के बिक्री केन्द्र सिर्फ़ बड़े शहरों में थे, इनमें भी केवल उन्हीं प्रकाशकों की पुस्तकें मिल पाती थीं। यानी बच्चों के लिए अच्छी पुस्तकों का अभाव तो था ही और उपलब्धता बिल्कुल नहीं के बराबर थी। कुछ संस्थाओं और प्रकाशनों ने अच्छी पहल की थी लेकिन उनकी समस्या थी पुस्तकों का वितरण। अधिकांश अच्छा साहित्य विकसित होकर गोदामों में पड़ा था। यह भी एक सच्चाई थी कि कम क़ीमत और बेहतर गुणवत्ता वाली पुस्तकों के लिए बाज़ार में कोई भी चैनल उपलब्ध नहीं थे और बच्चों के पास, अपने लिए पुस्तकें खरीदने की स्वतंत्रता नहीं होती है। स्कूल एक ज़रिया हो सकता था, यह सोचकर

हमारी कोशिशें स्कूलों में पैरेन्ट्स मीटिंग के दौरान पुस्तकों के प्रचार-प्रसार की रही। यहाँ से एक अनुभव तो यह हुआ कि हिन्दी क्षेत्र के पाठक, अभिभावक पुस्तकों पर ख़र्च कम करते हैं और नामी स्कूलों के अभिभावक सस्ती पुस्तकों को खरीदना अपनी शान के ख़िलाफ़ समझते हैं।

मेरे अनुभव के अनुसार पालक धीरे-धीरे बाज़ार की प्रवृत्ति को समझ रहे हैं, वे किताबें ख़रीद भी रहे हैं और स्कूलों से अच्छी पुस्तकों की माँग भी कर रहे हैं। केन्द्रीय विद्यालयों में बच्चों को पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाना भी एक सकारात्मक क़दम है। फिक्की के अनुसार मानव मूल्यों के विकास और उनके प्रोत्साहन के लिए पुस्तकें हमेशा से ही एक ज़रूरी माध्यम रही हैं। पुस्तकें राष्ट्र के उत्थान के लिए उत्प्रेरक का काम करती रही हैं, वे नए विचारों को सहेजने, उनको फैलाने, शिक्षा और मूल्यों को प्रोत्साहित करने और सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास में सहायक होती हैं।

तमाम समस्याओं के बावजूद देश का प्रकाशन सेक्टर 30 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि की दर से आगे बढ़ रहा है। यह एक सकारात्मक बात है लेकिन ऐसे कई सवाल हैं जिन पर भविष्य में चिन्तन-अध्ययन करना होगा कि इस वृद्धि का कितना हिस्सा मौलिक और उत्कृष्ट सामग्री का है, उसमें से कितनी सामग्री पाठकों तक पहुँचती है, कितने पाठक पढ़ते हैं या फिर उक्त आँकड़ों में हेर-फेर की गई है। इनमें पाठ्यपुस्तकों, कुंजियों, गाईडों, धार्मिक और ग़ैर-धार्मिक साहित्य, राजनैतिक साहित्य कितना है? लेखकों, रचनाकारों के शोषण का आँकड़ा कोई क्यों निकालेगा भला। आम आदमी पुस्तकें ख़रीद सके ऐसा हो सकेगा क्या? लोक भाषाओं में पुस्तकें हैं कि नहीं, नहीं हैं तो कौन बनाएगा?

सस्टेनेबिलिटी की महत्त्वपूर्ण चुनौती को साथ रखते हुए चिरन्तन विकास की ओर अग्रसर, समतापूर्ण और न्यायपूर्ण समाज के निर्माण के लिए, सभी के लिए सार्थक शिक्षा के सपने को पूरा करने के सफ़र में सैकड़ों कार्यकर्ता, हजारों रचनाकार, और लाखों पाठक साथ हैं। उम्मीद है हमारी यह पीढ़ी भारत में, 5 बच्चों के लिए एक पुस्तक की उपलब्धता के आँकड़े को कुछ बेहतर कर पाएगी।

References

i *Draft National Education Policy 2019*, https://mhrd.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/Draft_NEP_2019_HI.pdf

ii *http://ficci.in/sector.asp?secid=86*, Publishing Sector Profile

iii *ValueNotes. 2013. Mapping Study of Children's Literature in India, Mumbai*, Tata Trusts

iv *Rural outreach pilot study*, Abhishek Sudhakar

मनोज निगम एकलव्य, भोपाल में कार्यकारी अधिकारी (Executive Officer) हैं और 25 वर्षों से भी अधिक समय से युवा प्रोफ़ेशनल्स की एक टीम के साथ गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक सामग्री का प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। वे एक उत्साही लेखक हैं और उनके लेख जनसत्ता, सुबह-सवेरे, देशबन्धु, चकमक, स्रोत एवं नया ज्ञानोदय में छपते रहे हैं। उनसे *manojnig@yahoo.co.in* पर सम्पर्क किया जा सकता है।